

हिमालयी संस्कृति में परम्परागत प्राकृतिक औषधियों का महत्व एवं वर्तमान जीवन शैली में उनकी प्रासंगिकता : कुमाऊँ के विशेष सन्दर्भ में

श्रीमती खीला कोरंगा
इतिहास विभाग
रा0स्ना0महा0 मानिला, अल्मोड़ा

डॉ० नीरज रुवाली
डी लिट्
इतिहास विभाग
रा0स्ना0महा0 मानिला, अल्मोड़ा

शोध सारांश

मध्य हिमालय की गोद में स्थित उत्तराखण्ड का पर्वतीय क्षेत्र वन सम्पदा के साथ-साथ प्राकृतिक औषधियों से भी परिपूर्ण है। उत्तराखण्ड हिमालयी भू-भाग का एक प्रमुख खण्ड है जो सदियों से आरोग्यवादी विपुल आलौकिक भण्डार के रूप में माना जाता रहा है। उत्तराखण्ड में प्राकृतिक पौधों की लगभग 1750 प्रजातियाँ पाई जाती हैं। इनमें से लगभग 700 प्रजातियाँ औषधि के काम आती हैं। उत्तराखण्ड प्राकृतिक वनस्पतियों का खजाना है। चरक संहिता में इस क्षेत्र को वानस्पतिक बगीचा कहा गया है, और हिमालय को हिमवंत, औषधम भूमिनाम कहा गया है। सौ से अधिक उत्तराखण्ड की वनऔषधियों का प्रयोग इस समय औषधि निर्माण में किया जा रहा है। उत्तराखण्ड के कुमाऊँ हिमालयी क्षेत्रों में अनेक प्रकार की जड़ी-बूटियों को स्फूर्तिदायक तथा बलपूर्वक माना जाता है। स्थानीय लोगों द्वारा सर्दी-जुकाम, खाँसी, बुखार, शारीरिक दर्द तथा अन्य अनेक प्रकार की बिमारियों में इन औषधियों का प्रयोग प्राचीन काल से किया जाता रहा है।

उत्तराखण्ड को देवभूमि कहा गया है। अनेक जीवन दायनी वनौषधियों की यह जन्मस्थली है। इस क्षेत्र की अनेक औषधियाँ अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में इस समय सर्वाधिक बिकाऊ साबित हो सकती हैं, बस आवश्यकता है अन्तर्राष्ट्रीय मानकों के अनुरूप उनकी औषधीय गुणवत्ता को सुनिश्चित करने तथा वांछित मात्रा में उनकी आबाधित आपूर्ति बनाए रखने की। यह कार्य प्रकृति के दोहन मात्र से नहीं, बल्कि औषधीय पौधों की वैज्ञानिक खेती द्वारा संभव है, जिससे उत्तराखण्ड राज्य को वास्तविक अर्थों में हर्बल राज्य बनाया जा सकता है, जिसके लिए जड़ी-बूटियों की जैविक खेती, उनके विपणन, भण्डारण तथा मूल्यवर्धन तन्त्रों का विकास करना होगा।

Key Words: वनौषधि, हिमालय, औषधि, जड़ी-बूटी, जीवन-दायनी, आदिकाल

प्रस्तावना

पर्यावरण और मानव के अन्तर्सम्बन्धों का प्रभाव सांस्कृतिक विकास का मार्ग प्रशस्त करता है। आदिकाल से मानव का सांस्कृतिक विकास वनस्पतियों की पृष्ठभूमि से हुआ है। पाषाणयुगीन मानव के भोज्य पदार्थों में वन्य कन्दमूल फलों का महत्वपूर्ण स्थान रहा है। आज भी पौष्टिकता तथा औषधीय चिकित्सा की दृष्टि से इन वनस्पतियों का बहुत महत्व है। उत्तराखण्ड आध्यात्मिक दृष्टि से जितना समृद्ध है, उससे भी अधिक महत्व इस प्रदेश में पैदा होने वाली जड़ी-बूटियों का है। महर्षि चरक ने हिमालय को ही औषधियों का आश्रय स्थल मानते हुए स्पष्ट कहा है कि 'हिमवंत औषधम् भूमिनां श्रेष्ठम्। सृष्टि के आरंभ से ही हिमालय ने आयुर्वेद के विकास में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। संहिता-ग्रन्थों के अध्ययन से विदित होता है कि रोगों के निदान एवं चिकित्सा हेतु कई बार अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठियाँ इसी क्षेत्र की उपत्यकाओं में हुई, जिसमें देश-विदेश के अनेक चिकित्सा वैज्ञानिकों ने भाग लिया तथा संहिताओं का सृजन किया। अतः निर्विवाद कहा जा सकता है कि यह प्रदेश दिव्य औषधियों का उद्गम स्थान है। कुमाऊँ हिमालय की पर्वत-मालायें एवं धाटियाँ जड़ी-बूटियों के लिए प्रसिद्ध हैं। कुमाऊँ की

प्रमुख जड़ी-बूटियों के लिए प्रसिद्ध घाटियाँ हैं— दारमा घाटी, जोहार घाटी, व्यास घाटी, चौदास घाटी एवं दानपुर। आज भी यहाँ के निवासी, ग्रामवासी, वैद्य, वयोजन, वृद्ध घरों के आस-पास से जड़ी-बूटियाँ एकत्रित कर उन्हें घोट-पीसकर स्वरस, कल्क, पानक, क्वाथ एवं चूर्ण के रूप में रोग निवारणार्थ प्रयोग करते हैं। निःसन्देह यह क्षेत्र अपनी विशाल जड़ी-बूटी सम्पदा के लिए विख्यात है। भौगोलिक परिस्थितियाँ और वायुमण्डलीय दशाएँ यहाँ की जड़ी-बूटियों को विशिष्ट बनाती हैं। परम्परागत ज्ञान एवं व्यावसायिक सूझबूझ व कुशलता से यहाँ उपलब्ध औषधियों की गुणवत्ता दुनिया भर में प्रतिमान पाती रही हैं। कुमाऊँ हिमालय की सभी घाटियाँ अपनी जैव विविधता के लिए वनस्पति शास्त्रीयों एवं पर्यटकों को आकर्षित करते हैं। कुमाऊँ हिमालय की घाटियाँ जो जीवन दायनि भेषज, औषधीय पादप व सुगन्धित मसालों से समृद्ध हैं इनकी खेती भी की जाती है। इनमें से अनेक वनौषधि तथा जड़ी-बूटियों से कई प्रकार की औषधियों का निर्माण होता है। लोक चिकित्सा में भी इनका बहुल प्रयोग है, और इनके उपयोग की परंपरा प्राचीन समय से चली आ रही भरभूर समझ और ज्ञान है।

परम्परागत ज्ञान व उपयोग की जानकारी के साथ यहाँ के निवासियों के अध्यवसाय से उच्च हिमालय की जड़ी-बूटियों का संरक्षण व संवर्धन सम्भव बना, सामान्य रूप से ये जड़ी-बूटी एवं वनौषधियाँ शरीर में किसी भी प्रकार की बीमारी, सर्दी-जुकाम, बुखार, शारीरिक दर्द तथा अन्य अनेक प्रकार की बिमारियों में स्थानीय लोगों द्वारा इनका प्राचीन काल से उपयोग चला आ रहा है। हिमालय के वनों में आदिकाल से विभिन्न प्रकार की जड़ी-बूटियों का भण्डार रहा है। उदाहरण के लिए उत्तराखण्ड के कुमाऊँ हिमालय की घाटियों में जड़ी-बूटी तथा वनौषधि के रूप में कुटगी, मासी, जटामासी, चिरायता, दालचीनी, हरड़, जम्बू, गन्दरेंणी, भोजपत्र, कैल, खरसू, उतीस, काला जीरा, तेज-पत्र, हथजड़ी, तिमूर, रतनजोत या लालजड़ी, डोलू इत्यादि अनेक प्रकार जीवन दायनि वनौषधियाँ प्राप्त होती हैं।

शोध विधि तन्त्र

प्रस्तुत शोध का अध्ययन क्षेत्र उत्तराखण्ड कुमाऊँ हिमालय के मध्य एवं महान हिमालयी भू-भाग है। जहाँ पर उच्च हिमालयी वनौषधियों के साथ-साथ अन्य महत्वपूर्ण प्राकृतिक जड़ी-बूटियाँ उगती हैं। शोधार्थी इसी हिमालयी संस्कृति में पली-बड़ी है इसलिए इन प्राकृतिक जड़ी-बूटियों से भली-भाँति परिचित है। प्रस्तुत शोध में शोधार्थी द्वारा पूर्णतया अवलोकन, साक्षात्कार और द्वितीयक आँकड़ों का प्रयोग किया गया है। द्वितीयक आँकड़ों के संकलन में सरकारी, गैर सरकारी, विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं, समाचार पत्रों, एवं विगत अवधि में हुए राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशित शोध-पत्रों का सहयोग लिया गया है।

परम्परागत प्रमुख प्राकृतिक औषधियाँ उनका प्रयोग एवं महत्व

उत्तराखण्ड राज्य का हिमालयी एवं उच्चशिखरीय क्षेत्र आदिकाल से ही विविध औषधीय पादपों एवं जैव विविधता के लिए विश्व-विख्यात रहा है। यहाँ की जलवायु इन औषधीय पादपों के विकास के लिए अनुकूल रहा है। कुमाऊँ हिमालय का घाटी क्षेत्र जैव विविधता का धनी है। यहाँ ये प्रमुख घाटियाँ हैं— जोहार, दारमा, व्यास, चौदास आदि। यहाँ पाई जाने वाली प्रमुख औषधियाँ एवं उनका महत्व इस प्रकार है—

जम्बू तथा गंधरेंणी— सामान्य रूप से पिथौरागढ़ जिले के सीमांत क्षेत्रों जोहार घाटी, दारमा, व्यास, चौदास आदि क्षेत्रों में सुगन्धित मसालों के रूप में जम्बू और गन्दरेंणी की मांग सदैव बनी रहती है। इसका कारण यह है कि एक ओर तो ये विशिष्ट सुगन्ध व स्वाद युक्त होते हैं, दूसरी ओर इनमें अनेक औषधीय गुण हैं। ये जड़ी-बूटियाँ

पाचन की अनेक समस्याओं को भी दूर कर देते हैं। वनस्पति शास्त्रियों के अनुसार जम्बू में एलिसीन नामक रसायन विद्यमान होता है जो शरीर की प्रतिरोधक क्षमता को तो बढ़ाता ही है साथ ही जोड़ों के दर्द एवं मांसपेशियों की सूजन को भी दूर करता है। दूसरी तरफ गन्दरेणी की सूखी जड़े पेट के कई जटिल रोगों का निदान करने में सहायक है। इनमें अल्सर की कई किस्मों व पित्त की समस्याएँ मुख्य हैं। यकृत के विकारों को दूर करने में परम्परागत रूप से यह लोकप्रिय औषधि रही है। साथ ही पेट की कई बीमारियों जैसे कब्ज, अजीर्ण, उल्टी, अपच वायु विकार को भी दूर करती है। गन्दरायण को स्थानीय भाषा में छीपी के नाम से भी जाना जाता है।

कूट और कूटकी — इनमें कूटकी मूलतः उच्च पर्वतीय क्षेत्रों व बुग्यालों में उगने वाली वनस्पति है। कूटकी की पतली मुड़ी हुई जड़े स्वाद में बहुत कड़वी, कटु, तिक्त होती है पर भुख बढ़ाने, रोगों की पुनरावृत्ति रोकने, खून की कमी दूर करने, प्रमेह व दाह कम करने में यह उपयोगी है। चर्म रोग, मधुमेह, शिशु रोग व सेहत बनाए रखने के लिए इनका प्रयोग वैद्यों व जानकारों द्वारा खूब किया जाता है। मधुमेह की उत्तम औषधि के साथ ही कूटकी लीवर टॉनिक तथा रक्त शोधक के रूप में प्रयोग की जाती रही है। लोक उपचार में जटिल बुखार को दूर करने के लिए कूटकी की जड़ों को काले जीरे के साथ पानी में भिगा व छान कर पिलाते हैं। कूटकी में पिकरोराइजिन ग्लूकोसाइड मुख्य है। कूटकी एक दुर्लभ प्रजाती है। जोहार घाटी के उच्च हिमालीय क्षेत्र में नम छायादार स्थानों, बुग्यालों व घाटियों के पथरीले स्थानों में उगती है।

कूट की जड़े अपेक्षाकृत कुछ मोटी होती हैं। इसकी जड़ों का चूर्ण या क्वाथ गैस व पेट की बीमारियों का निवारण करता है। पेट में दर्द व अपच को कूट तुरन्त दूर करता है। उन्माद, अपस्मार, मानसिक विकारों में, चर्म रोग दूर करने में, सर की खुजली व कोढ़ के निदान हेतु बनी औषधियों में कूट का प्रयोग होता है। अस्थमा, टाइफाइड, अल्सर धाव व गठिया के साथ हृदय रोगों में इसकी जड़ों का चूर्ण दिया जाता है जिसमें ससुरीन नामक अलक्लोइड व वाष्पशील सुगन्धित तेल विद्यमान होता है।

बिल्ल— जोहार घाटी में पाई जाने वाली बिल्ल जिसे ज्यूनियर भी कहते हैं, के पत्तों से धूप बनती है। स्थानीय निवासी पूजा-पाठ सामग्री में धूप के रूप में इसका प्रयोग बहुतायत मात्रा में करते हैं। इसकी खासियत यह है कि इसका पौधा कच्चा ही जल जाता है, अक्सर ग्रामवासी आग जलाने में भी इसका प्रयोग करते हैं।

थुनेर या ल्वेंटा— जोहार घाटी में ऐसी औषधियाँ भी हैं जो कैंसर प्रतिरोधी सिद्ध की गई हैं। इन पर लगातार अनुसन्धान किए गये हैं। इनमें मुख्य है—थुनेर, जिसे स्थानीय भाषा में ल्वेंटा भी कहा जाता है। यह कफ और बात की जटिल बीमारियों को भी दूर करता है। यह रक्त चाप को नियंत्रित करने में सहायक होता है। औषधि के रूप में इसकी छाल और पत्ती का प्रयोग किया जाता है। इसकी छाल की चाय भी पी जाती है, जिसे नमकीन चाय के रूप में जाना जाता है। स्थानीय भाषा में इस चाय को ज्या बोला जाता है।

अतीस— शरीर में विष के प्रभावों को दूर करने में अतीस महत्वपूर्ण मानी गई है। इसे विषा, अतिविषा, प्रतिविषा के नाम से भी जाना जाता है। यह धासीय मैदानों व ढलानों में उगता है। यह एक शाकीय पौधा है। इसकी जड़ों का प्रयोग किया जाता है। अति दोहन से अतीस संकटग्रस्त प्रजाती में रखा गया है। मुनस्यारी के मिलम, गनधर, लास्या में इसकी व्यावसायिक खेती होती है। यह कन्धों के दर्द, तेज बुखार और पेट दर्द को दूर करने में भी सहायक होती है। अतीस को सर्वरोग हर कहा जाता है। यह जटिल रोगों के बाद होने वाली शरीर की दुर्बलता को दूर करता है। लोक व्यवहार में इसकी जड़े स्फूर्तिकारक व बलपूर्वक मानी जाती है। खाँसी, बुखार, सर्दी—जुकाम, व शरीर में दर्द होने पर इसकी पत्तियाँ चबाने को दी जाती है। पेट दर्द व अतिसार में अतीस की जड़ का काढ़ा पिलाया जाता है। यह बुखार की अचूक दवा है। इसके कंध को धो कर छाया में सुखाया जाता है।

काला जीरा— काला जीरा जिसे थोया भी कहा जाता है, के बीज पतले व काले रंग के होते हैं। पाचन के सभी विकार दूर करने में इसके बीज और फलों का प्रयोग किया जाता है। यह काफी सुगन्धित और मंहगा मसाला है। जिसे चटनी, रायता, सलाद व दाल सब्जी में अल्प मात्रा में डाला जाता है। काले जीरे के सेवन से ज्वर, वात, कप नष्ट होता है। शरीर की जकड़न को दूर करने में इसका काफी प्रयोग किया जाता है। काले जीरे में कारबोन तथा कारबिन के साथ वाष्पशील तेल होता है। इस कारण इसकी मांग साबुन, टूथपेस्ट, पैकेज्ड फूड और शराब उद्योग में काफी होता है। जोहार के ऐसे क्षेत्र जहाँ बारिश अधिक नहीं होती और शीत ऋतु में बर्फ पड़ कर जम जाती है, तथा अंकुरण समय में ना बर्फ हो न पाला, वहाँ काला जीरा खूब उगता है। इसकी खेती भी ऐसे ही इलाकों में होती है।

तिमूर— सामान्य प्रयोग में तिमूर के बीजों की चटनी बनती है। इसको नमक के साथ पीसने पर काफी स्वादिष्ट नमक बनता है। पिथौरागढ़ के पर्वतीय क्षेत्रों में पाई जाने वाली वनौषधि तिमूर दाँतों में लगने वाले पायरिया रोग में भी बेहद कारगर रहता है। जानकार लोग इसका प्रयोग दातून के रूप में करते हैं। इसकी टहनियों से बनी दवा रक्तचाप नियंत्रित करती है। तिमूर का वैज्ञानिक नाम जेनथोजायलम अर्मेटम है। इसका प्रयोग मसालों के रूप में भी किया जाता है। जाड़ों में सीमांत के लोग इसके सूप का प्रयोग शरीर को गर्म रखने में करते हैं। तिमूर के पौधे में कांटे होने से यह जंगली जानवरों से खेती की सुरक्षा करने में भी कारगर है। कई लोग तारबाड़ के लिए भी खेतों के किनारे तिमूर के पौधे लगा देते हैं।

तिमूर के प्रयोग से सफेद, कोढ़, और अस्थमा, हृदय की दुर्बलता, पेट दर्द गठिया के साथ आँख और कान की कई बिमारियाँ ठीक हो जाती हैं। तिमूर की छाल में बेरबीर, डिकटेमनिन एल्कलॉयड पाये जाते हैं।

रतनजोत— इसे लालजड़ी भी कहते हैं। यह तेल में धुलकर लाल रंग छोड़ती है। इसकी जड़ हृदय की दुर्बलता, रक्त विकार, धाव, गठिया, और तीव्र बुखार के निदान में उपयोगी है। साथी ही कोढ़ तथा डिप्रेशन जैसे रोगों को नियंत्रित करने में इसका प्रयोग किया जाता है। इसकी जड़े लाल पत्रकों से ढकी होती है।

लोक उपचार में इसकी जड़ों के लेप से घाव भरे जाते हैं। इसे तेल के साथ गरम करने से गठिया रोग दूर होता है। इसकी पत्तियों का रस नाक में डालने से मिर्गी की मूर्छा दूर की जाती है। पत्तियों का क्वाथ तेज

बुखार को दूर करता है, व इसका काढ़ा हृदय की गति को नियंत्रित करता है। पत्तियों की भस्म को मुँह के छालों में लगाते हैं। शहद के साथ इसकी जड़ों के चूर्ण को देने से रक्त विकार दूर होते हैं। अब इसकी खेती होने लगी है व इसकी फसल पर रोग व कीटों का प्रकोप नहीं होता।

जटामासी— जोहार घाटी में चार हजार मी० की ऊँचाई तक पहाड़ी ढलानों और घाटी वाली पथरीली जगहों में जटामासी स्वतः ही उगती है। अनियंत्रित दोहन से अब यह काफी अल्प मात्रा में पाई जा रही है। बालों को काला करने व गंजापन दूर करने के गुण होने से इसका उपयोग बालों के लिए तेल बनाने में होता रहा है।

जटामासी के जड़ों में हल्के पीले रंग का वाष्पशील तेल होता है जिससे इसकी विशेष खुशबू होती है। धूप, अगरबत्ती और इत्र के निर्माण में भी इसका उपयोग किया जाता है। स्थानीय लोगों द्वारा इसकी जड़ों के लेप से घाव भरे जाते हैं। इसका चूर्ण अनिद्रा, चिंता, याददाश्त कम होना, ऊँचे रक्त चाप, उन्माद व मानसिक उत्तेजना शांत करने में किया जाता है।

कीड़ाजड़ी/यारसा गंबू— उत्तराखण्ड के सीमांत जिले पिथौरागढ़ के उच्च हिमालयी क्षेत्रों में एक खास जड़ी मिलती है, जो कि कथित तौर पर दुनिया की सबसे मंहगी और अनूखी बूटी है। अंतर्राष्ट्रीय बाजार में खास मांग होने के कारण इसकी कीमत लाखों में होती है। इस बूटी को स्थानीय भाषा में यारसा गंबू कहा जाता है। हिमालय में जब बर्फ पिघलती है तो उस समय इस बूटी को यहाँ के स्थानीय निवासी खोजकर लाते हैं। पिथौरागढ़ के धारचूला, मुनस्यारी के अतिरिक्त यारसा गम्बू अन्य हिमालयी राज्यों में भी पाई जाती है। सीमान्त क्षेत्रों में रहने वालों की आजीविका का यह एक मुख्य श्रोत है।

कीट वैज्ञानिक डॉ० पृथ्वीराज जी के साथ हुए साक्षात्कार में वे बताते हैं कि कीड़ा धास समुद्र तल से 3200–4800मी० तक हिमालयी एवं उच्च हिमालयी क्षेत्रों में पाया जाता है। यह फफूंद थीटारोडस प्रजाति के कीट के लारवा पर पूर्णतः परजीवी जीवन व्यतीत करता है, जो कि फफूंद के बीज (स्पोर्स) के सम्पर्क में आकर संक्रमित हो जाता है। शीत ऋतु के आरम्भ में जब लारवा “डायपॉज” अवस्था में जमीन के अन्दर प्रवेश करता है तब संक्रमण के कारण लारवा मृत हो जाता है, तथा फफूंद लारवा के आंतरिक भागों को पूर्णतः गलाकर फफूंद का माइसीलियम लारवा के अन्दर फैल जाता है। ग्रीष्म ऋतु के आगमन पर फफूंद की फ्रूटिंग बॉडी लारवा के शीर्ष भाग से बाहर आ जाती है, जिस कारण यह कीड़ा धास के नाम से जाना जाता है।

जोहार, व्यास, दारमा, छिपलाकेदार आदि हिमालयी क्षेत्रों में यह पाया जात है। इस बूटी का मुख्य उपयोग बढ़ती उम्र को रोकने, शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत बनाने, शरीर के ऊर्जा स्तर को बढ़ाने में, किडनी, फेफड़े, हृदय की कार्यशक्ति को बढ़ाने एवं जनन सम्बन्धी बिमारियों को दूर करने में किया जाता है। कीड़ा—जड़ी में पाये जाने वाला महत्वपूर्ण अवयव कार्डीसेपिन अम्ल, डी—मेनीटॉल, पॉलीसेकेराइडस एवं महत्वपूर्ण अमीनो अम्ल की उपस्थिति के कारण यह बहुऔषधीय उपयोग में आता है।

इन जड़ी-बूटियों के अतिरिक्त कुमाऊँ हिमालयी घाटी क्षेत्रों में अनेक जीवन-दायनी वनौषधियाँ प्राप्त होती हैं, जिस कारण प्रकृति का यह वरदान क्षेत्र लोगों का जीवन समृद्ध कर रहा है।

निष्कर्ष एवं सुझाव—

हिमालयी वनौषधियाँ प्राचीन हिमालयी संस्कृति में जीवन-शैली का एक अभिन्न अंग थी। तब यह मात्र उत्तम स्वास्थ्य के लिए औषधि के रूप में प्रयोग न करके मुख्य भोजन में किसी न किसी रूप में सम्मिलित थी। उत्तराखण्ड में प्रागैतिहासिक काल के अनेकों प्रमाण अलग-अलग स्थानों पर मिलते हैं। उस समय के मानव का प्रमुख भोजन शिकार एवं कन्दमूल ही थे, तो निश्चित तौर पर हम कह सकते हैं कि हिमालय की प्रागैतिहासिक मानव सभ्यता उस समय भी यहाँ पर उगने वाली इन वनौषधियों का प्रयोग करती होगी।

मध्य हिमालय की गोद में स्थित पर्वतीय क्षेत्र वन सम्पदा के साथ-साथ वनौषधियों से भी परिपूर्ण है। कुछ मूल्यवान जड़ी-बूटियों का पता लगाने के पश्चात उनको औषधि के रूप में परिणत किया जा चुका है, किन्तु अभी भी ऐसी बहुत सी मूल्यवान जीवन दायनी जड़ी-बूटियों की दिशा में आगे खोज की आवश्यकता है। तथा अत्यन्त उपयोगी बहुमूल्य जड़ी-बूटियों का पता लगाना अभी शेष है। सीमांत क्षेत्रों में गरीबी व अत्यधिक पैसों की चाह जड़ी-बूटियों के अनियंत्रित दोहन के रूप में सामने आई है। जहाँ हिमालयी उपज का अधिकाँश पैसा विदेशों में चला जाता है, वही औषधीय पादपों हेतु देश व प्रदेश की नीतियाँ नाकाफी साबित हुई हैं। इस बीच जारी है सीमांत क्षेत्र की संस्कृति में जबरदस्त बदलाव का दौर, साल-दर-साल बढ़ते जड़ी-बूटियों के दाम एवं बुग्यालों का अनूठा भूगोल, यहाँ ग्रामीणों की सांस्कृतिक विरासत व अन्य परम्परागत तन्त्रों में अतिक्रमण कर चुका है। राज्य गठन से पूर्व निकासी का कार्य ठेकेदारी प्रथा से होने के कारण बहुमूल्य एवं दुर्लभ संपदा की उपेक्षा होती रही है, जिससे इस क्षेत्र के विकास को भी बाधा पहुँची है। इसके अतिरिक्त जड़ी-बूटियों के अत्यधिक दोहन के कारण अनेक अमूल्य जड़ी-बूटियों विलुप्त हो गई हैं। अपनी संपदा का सही उपयोग करते हुए उससे समुचित लाभ प्राप्त करने के लिए कुछ प्रयास किए जाने चाहिए—

1. हिमालयी घाटी क्षेत्र लोगों का जीवन समृद्ध कर रहा है, फिर भी इसे व्यापक रूप में आर्थिकी का महत्वपूर्ण घटक बनाने के लिए इसके वैज्ञानिक और सतत दोहन का ज्ञान होना आवश्यक है।
2. राज्य सरकार द्वारा प्रकृति के इन धरोहरों को संरक्षित करने एवं इनके प्रसंस्करण, विपणन, व कृत्रिम उत्पादन हेतु विशेष प्रयास किया जाना चाहिए।
3. भौगोलिक आंकलन कर क्षेत्र में दोहन के प्रभाव का अध्ययन कर स्थानीय लोगों को सीमित किया जाए जिससे प्रकृति द्वारा प्रदत्त जड़ी-बूटी, पेड़-पौधों एवं हिमालयी जीव-जन्तु पर दुष्प्रभाव न पड़े।

4. जड़ी-बूटियों के लिए चिन्हित क्षेत्रों को जैविक भूमि में बदलने की आवश्यकता है। जैविक उत्पादों, जैसे जैविक खादों, जैविक कीट एवं रोगनाशी, बायोडायनेमिक खादों आदि की उपलब्धता बढ़ाकर भूमि को जैवांश बनाया जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. <https://w.w.w.kafaltree.com>.
2. <https://w.w.w.amarujala.com>.
3. पंचाचूली प्रवेशांक-2018
4. उत्तराखण्ड समग्र ज्ञानकोश, डॉ० राजेन्द्र प्रसाद बलौदी
5. पहाड, 16-17 पिथौरागढ़-चम्पावत अंक
6. डॉ० पृथ्वीराज व्यक्तिगत साक्षात्कार, 20 जनवरी 2024
7. उत्तराखण्ड ईयर बुक, 2015
8. उत्तराखण्ड का प्रादेशिक भूगोल, डॉ० एस०सी० खर्कवाल
9. संस्कृति संगम उत्तरांचल, यमुनादत्त वैष्टान 'अशोक'
10. Aromatic and Medicinal Plants in Central Himalayas, Nalini Joshi, Narendra Kumar.